प्रेमचन्द्र के यथार्थ चेतना

सिन्धु कुमारी
हिन्दी विभाग
IGNOU, पटना।

सारांश

प्रेमचन्द हिन्दी कथा–साहित्य के अमर कथाकार हैं। हमारे भीतर के श्रेष्ठ को उकेरनेवाले सशक्त रचनाकार हैं। उनके पास कुछ ऐसी विशेषताएँ थीं जिनसे आदमी बड़ा बनता है और साहित्य भी बड़ा बनता है। वे ऐसे कहानीकार हैं, जिन्होंने छोटे आदमी के बड़े कद की पहचान करायी। समाज के असंख्य दलितों, पीड़ितों, उपेक्षितों, शोषितों की पीड़ा औश्र शक्ति से हमें जोड़ा। इसी कारण वे हिन्दी कहानी के एक ताकतवर यथार्थवादी कथाकार सिद्ध हुए। किन्तु क्या कहा जाए, अनेक विचार के लोगों ने उन्हें अलग–अलग नजरिये से देखा। मार्क्सवादियों ने बताया कि प्रेमचन्द मार्क्सवादी विचारधारा के मसीहा थ। गाँधीवादियों ने उन्हें गाँधीवादी करार दिया। कुछ लोगों की दृष्टि में वे समाज–सुधारक हैं। व्यक्तिवादी चेतना के प्रश्रयदाता की संज्ञा भी उन्हें दी गयी। कुछ ऐसे भी लोग हैं जो उनके जीवन की घटनाओं से स्थूल रूप में उनके साहित्य को जोड़कर उनका आकलन करते हैं, किन्तु किसी लेखक की श्रेष्ठ रचनाओं के आधार पर ही उसका मूल्यांकन करना उचित होता है।

शब्द कुंजी: रचनाकार, यथार्थवादी, मार्क्सवादी, गाँधीवादी, व्यक्तिवादी

प्रेमचन्द का कहानी काल 1907 ई. से लेकर 1936 ई. तक फैला हुआ है। उन्होंने कहानी के क्षेत्र में अपने अवतरण के सम्बन्ध में लिखा है – 'मैंने पहले–पहल 1907 ई. में गल्प लिखना शुरू किया। गुरूदेव रवीन्द्रनाथ की कई गल्पें पढ़ी थीं और उनका उर्दू अनुवाद भी कई पत्रिकाओं में छपवाया था। उपन्यास तो मैंने 1901 ई. में लिखना शुरू कर दिया था, मेरा पहला उपन्यास 1902 ई. में और दूसरा 1904 ई. में निकला, लेकिन गल्प 1904 के पहले मैंने एक भी न लिखी थी। मेरी पहली कहानी का नाम था, 'संसार का सबसे अनमोल रत्न'। उसके बाद चार–पाँच कहानियाँ और लिखीं। उनका संग्रह 1909 ई. में 'सोजेवतन' के नाम से छपा[2]

डॉ० मनन द्विवेदी ने बताया कि 'उर्दू संसार के हिन्दी–महारथियों में प्रेमचन्द जी का स्थान बहुत ऊँचा है। अनेक नामों से आपकी पुस्तकें उर्दू संसार की शोभा बढ़ा रही हैं। हर्ष की बात यह है कि मातृभाषा हिन्दी ने कुछ दिनों से आपके चित्त को आकर्षित किया है।

आपकी कहानियाँ हिन्दी संसार में अनूठी चीज हैं। कुछ लोगों का विचार है कि आपकी गल्पें साहित्य मार्त्तण्ड रवीन्द्र बाबू की रचना से टक्कर लेती हैं।''[3]

प्रेमचन्द ने अपने जीवन में तीन सौ से अधिक कहानियाँ लिखीं, जिनका संग्रह 'मानसरोवर' नाम से आठ भागों में है। प्रेमचन्द ने जिस समय कथा–साहित्य में प्रवेश किया, उस समय हिन्दी कहानी की अपनी कोई न शैली थी, न पहचान। अपनी कहानियों के माध्यम से उन्होंने किसान, मजदूर, मिल–मालिक, महानगर की बड़ी चिमनियों से धुएँ में सिसकता कारीगर, वकील, प्रोफेसर, डॉक्टर, चोर–डाकू देशभक्त सभी को वाणी दी। सभी को सजीवता प्रदान की। सर्वहारा वर्ग के रहनुमा बन गोर्की, तॉल्स्ताय, अनातोले की श्रेणी में आये। अन्तराष्ट्रीय ख्याति के कहानीकार हुए।[4]

प्रेमचन्द की कहानियों में यथार्थचेता को जानने के लिए उनके समय की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक स्थितियों को जाननता निहायत जरूरी है। ''उनका युग राष्ट्रीय और सामाजिक उथल–पुथल का युग था। संघर्ष–काल था। साम्राज्यवाद से राष्ट्रवाद का, सामंती सभ्यता से महाजनी सभ्यता का, सामंती और महाजनी दोनों सभ्यताओं से शोषितों किसानों और मजदूरों की शक्तियों का राजनीतिक क्षेत्र में उथल–पुथल मची हुई थी। राजनीति में सत्याग्रह, समझौता, निवेदन, सहयोग आदि को प्रमुखता मिली हुई थी।''[5]

सामाजिक क्षेत्र में कई वर्ग आपस में टकरा रहे थे। सामंतवादी समाज और महाजनी समाज में तो टकराहट थी ही, जमींदारों और किसानों, पूँजीपतियों और मिल–मालिकों के बीच वैसी ही स्थिति थी। जमींदार किसानों से भूमि–टैक्स लेकर सरकार को देता था और स्वयं भी मौज करता था। सरकार के कर्मचारी भी प्रायः किसानों के पास आकर उन्हें तबाह किया करते थे। सूदखोर महाजन कड़ा सूद ले किसानों को कर्ज के जाल में उलझाये रखते थे। उनके घर–द्वार नीलाम कराये जाते थे। खेत से दानाबंदी कराकर अनाज को खलिहान से जोखवा लिया जाता था।

धार्मिक क्षेत्र में भी कम शोषण नहीं था। उसका रूप इंसान को शिकंजे में जकड़नेवाला था। अंधविश्वास और रूढ़ि की प्रधानता थी। किसाने बेचारे हर जुल्म को पाप का फल मानने लगे थे। खून चूसनेवाले पंडितों की चाँदी कट रही थी। 'पूस की रात' कहानी का हलकू मजूरी के जीवन को किसान–जीवन से अच्छा बताकर उपर्युक्त सत्य पर मुहर लगाता है। उस समय मध्यवर्ग की हालत भी अच्छी नहीं थी, क्योंकि इसमें कमानेवाला पुरुष था और खानेवाला मर्द–औरत पूरा परिवार। निम्नवर्ग औरत–मर्द दोनों अर्थोपार्जन करते थे।

ऊपर प्रेमचन्द काल की राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक स्थितियों का जो उल्लेख किया गया वह प्रेमचन्द की अधिकांश कहानियों में देखने को मिलती हैं। उन्हें पढ़ने से

पता चलता है कि प्रेमचन्द सचमुच यथार्थचेतना के कहानीकार थे। यथार्थ को ज्यों–का–त्यों मान लेना यही यथार्थवादी कलाकार की असली पहचान है। प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों में लूट–खसोट, घूसखोरी, बेईमानी, गलत आचरण, ढ़ोंग, फरेब, शोषण आदि सब ध्वनित होते दिखलाई पड़ते हैं।

प्रेमचन्द ने ऐतिहासिक, राष्ट्रीय, धार्मिक, आर्थिक और सामाजिक सभी प्रकार की कहानियाँ लिखीं। उनकी सामाजिक कहानियाँ हैं – 'ममत', 'यह मेरी मातृभूमि है', 'आगा–पीछा', 'कायर', 'लाग डाँट', 'विश्वास', 'उद्धार', 'दीक्षा', 'गुल्ली–डंडा', 'प्रेरणा', 'त्यागी का प्रेम', 'सौभाग्य के कोड़े', 'उन्माद', 'प्रेम', 'दारोगाजी', 'सद्गति', 'स्वामिनी', 'बड़े घर की बेटी', 'तैतर', 'मुक्तिधन', 'क्षमा', 'सवा सेर गेहूँ', 'सेवामार्ग', 'ज्वालामुखी', 'लैला', 'बड़े भाई साहब', 'गृहनीति', 'स्मृतिका', 'पुजारी', 'मंत्र', 'ब्रह्म का स्वांग', 'खून सफेद', 'शान्ति', 'स्मृति का पुजारी', 'लाटरी', 'दो कब्रें', 'बलिदान', 'विध्वंस', 'उपदेश और 'न्याय' आदि।

इन सभी कहानियों में प्रेमचन्द ने समाज की विकृत अवस्था, दुरवस्था, शोषक–शोषित वर्ग–भेद–वर्णन, ग्रामीण समाज की कुरीतियों का चित्रण यथा परदा–प्रथा, वेश्यावृति की बुराइयाँ, बाल–विवाह, अनमोल विवाह, विधवाओं की दयनीय स्थिति, मृतक–भोज, वर्ण–व्यवस्था की बुराइयाँ, पर्व–त्योहार पर प्रचलित कुव्यसनों, शोषक वर्ग की करतूतों–हथकण्डों, महाजनी व्यवस्था के दोषों, जमींदारों के शोषण–अत्याचारों, सरकारी अधिकारियों की लूट–खसोट तथा प्रशासनिक व्यवस्था के दोषों का खुलकर उल्लेख, चित्रण, विरोध, समर्थन, निन्दा, पर्दाफाश और निरूपण किया है। ये सभी प्रमाणित करते हैं कि कथाकार प्रेमचन्द यथार्थवाद के मसीहा थे। आदर्शोन्मुख यथार्थवादी थे।[6]

प्रेमचन्द की कहानियों पर आद्योपान्त विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि उनकी आरंभिक कहानियों का लक्ष्य है आदर्शवाद की स्थापना कर असत् पर सत् की विजय दिखलाना, पारिवारिक–सामाजिक–राजनीतिक – धार्मिक आदि समस्याओं का उद्घाटन करना तथा भारतीय परम्परा, संस्कृति और सभ्यता के प्रति अटूट अनुराग पैदा करना।

उनकी विकासकालीन कहानियाँ प्रायः यथार्थ की पृष्ठभूमि पर स्थित हैं। उनमें किसी न किसी मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन हुआ है। इसी प्रकार उनकी उत्कर्षकालीन कहानियाँ प्रायः मनोवैज्ञानिक अनुभूतियों की सुदृढ़ नींव पर स्थित हैं। उनमें गरीबी की अनुभूति का सजीव और दमदार चित्रण हुआ है। विद्रोह और क्रान्ति का शंखनाद फूँका गया है। प्रेमचन्द का समग्र हिन्दी कथा–साहित्य और कुछ नहीं, उत्तर भारत के सच्चा जीवन का कच्चा चिट्ठा है। किसानों, मजदूरों, अछूतों, मुरझाए हुए होठों और कुम्हलाए हुए गालों की केन्द्रवली धुरी है। जीवन और लेखन के अन्तिम पड़ाव में पहुँच कर उनका जैनेन्द्र जी से यह कहना कि 'आदर्श

से काम नहीं चलेगा' अपनपे में कुछ मायने रखता है। उनकी यथार्थचेतना की ओर इशारा करती है।[7]

इस प्रकार 'मंगलसूत्र व अन्य रचनाएँ' पृ. 390 पर यह लिखा जाना भी स्पष्ट करता है कि प्रेमचन्द यथार्थवाद के समर्थक थे – ''दरिंदों के बीच में, उनसे लड़ने के लिए हथियार बाँधना पड़ेगा। उनके पंजों का शिकार बनना देवतापन नहीं, जड़ता है।'' उनका यह मन्तव्य स्पष्ट करता है कि उनके लेखन का एक दौर ऐसा भी आया जिस पर प्रगतिशील विचारधारा की स्पष्ट छाप पड़ी। उनकी पत्नी शिवरानी देवी लिखती हैं – ''जबतक वहाँ साहित्य में तरक्की न होगी, तबतक साहित्य, समाज और राजनीति सब के सब ज्यों के त्यों पड़े रहेंगे।''[8]

निष्कर्षतः कहा जाता सकता है कि प्रेमचन्द के कथा–साहित्य में यथार्थचेता के सम्यक् दर्शन होते हैं। वे लोकचेतना के रहबर थे।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. कथाकार प्रेमचन्द, सम्पादक : डॉ. रामदरश मिश्र
2. जीवनसार (आत्मकथा)
3. मन्नन द्विवेदी गजपुरी के विचार – 8 जून 1917 ई.
4. भारतीय साहिय कोश, सम्पादक : डॉ. नगेन्द्र, पृ. 765
6. हिन्दी के प्रतिनिधि कहानीकार, डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, 3 प्रेमचन्द
7. प्रेमचन्द : एक कृति व्यक्तित्व, जैनेन्द्र, पृ. 57
8. प्रेमचन्द घर में, शिवरानी देवी।